भारत ज्ञान विज्ञान समिति

BGVS

भारत के महान वैज्ञानिक

बीरबल साहनी

भारत के महान वैज्ञानिक

आचार्य बीरबल साहनी

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

जनवाचन आंदोलन

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने 'जन वाचन आंदोलन' के तहत किया गया है। इस आंदोलन का मकसद आम जनता एवं बच्चों में पठन-पाठन संस्कृति विकसित करना है।

आचार्य बीरबल साहनी	Aacharya Beerbal Shahni
संस्करण मार्च 2017	Edition Mar 2017
चयन और संकलन बीजीवीएस	Selection & Collection BGVS
कवर हरदीप सिंह	Cover Hardeep Singh
चित्र संकलन पारस कुमार झा	Photo Collection Paras kumar Jha
सहयोग राशि 35.00 रुपये	Contributory Price Rs 35.00
मुद्रण अवनीत ऑफसेट प्रेस दिल्ली-32	Printing Avneet Offset Press Delhi-32

ज्ञान विज्ञान प्रकाशन

Publication and Distribution

Bharat Gyan Vigyan Samiti

59/5, Third Floor, Near K-Block, Ravidas Marg, Kalkaji New Delhi 10019
Email: bgvsdelhi@gmail.com, bgvs_delhi@yahoo.com
Ph: 011-26463324, 26469773

आचार्य बीरबल साहनी

आचार्य बीरबल साहनी बहुमुखी प्रतिभा वाले एक विश्वविख्यात वैज्ञानिक थे। जगदीशचन्द्र वसु के अलावा जिन भारतीय वैज्ञानिकों ने वनस्पति- शास्त्र के प्रयोगों से अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की है, उनमें बीरबल साहनी का नाम प्रमुख है। वे एक महान वैज्ञानिक होने के साथ-साथ महान देशभक्त भी थे।

आचार्य साहनी का जन्म 14 नवम्बर 1891 को पंजाब के भेढ़ा गांव में हुआ था। उनके पिता, प्रो. रुचिराम साहनी गवर्नमेंट कालेज, लाहौर के रसायनशास्त्र के

आचार्य और प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे। उनकी माता श्रीमती ईश्वरीदेवी अपने भले स्वभाव के लिए जानी जाती थीं। सुयोग्य माता-पिता के सुयोग्य पुत्र थे-बीरबल साहनी।

अपनी प्रारम्भिक शिक्षा लाहौर के केंद्रीय विद्यालय और सरकारी महाविद्यालय में पूरी करने के बाद वे 1911 में कैम्ब्रिज में पढने के लिए विलायत गए। उनके वहां पहुंचने के बाद जल्द ही प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ हो जाने के कारण 1919 तक वे वहीं रहे।

आरम्भ से ही वे सच बोलने वाले, निडर और न्यायप्रिय थे। अपनी योग्यता और सत्यप्रियता से उन्होंने विश्वविद्यालय के अधिकारियों का दिल जीत लिया था। 1914 में वैज्ञानिक अनुसंधान-सम्बन्धी उनका एक लेख वनस्पति-विज्ञान के प्रसिद्ध पत्र *'न्यू फाईटोलाजिस्ट'* में प्रकाशित हुआ। जिसकी बड़ी प्रशंसा हुई। कैम्ब्रिज में
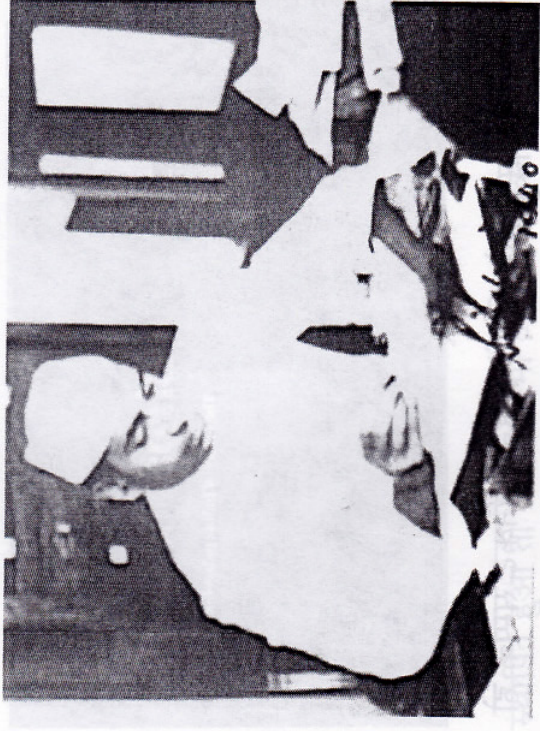
कोर्स की किताबों के अलावा और भी जरूरी विषयों का उन्होंने अध्ययन किया। बहुत-सी स्लाईडें बनाईं और बहुत-से प्रस्तरावशेष जमा किए। जिनकी सहायता से बाद में वे अपने शिष्यों को पढ़ाया करते थे। कैम्ब्रिज में उन्होंने बड़ा सादा जीवन बिताया। अपने माता-पिता से धन की सहायता लिए बिना अपनी वार्षिक छात्रवृत्ति से ही उन्होंने सारे खर्च पूरे किए।

उन्होंने लन्दन विश्वविद्यालय से एम.एस-सी. और डी.एस-सी. की उपाधियां भी प्राप्त कीं। उनके अनुसन्धान-कार्य की महत्ता को समझकर लन्दन की रायल सोसाइटी और इमेन्युअल कालेज ने उन्हें आर्थिक सहायता दी थी। इस प्रकार यूरोप और ब्रिटेन के करीब-करीब
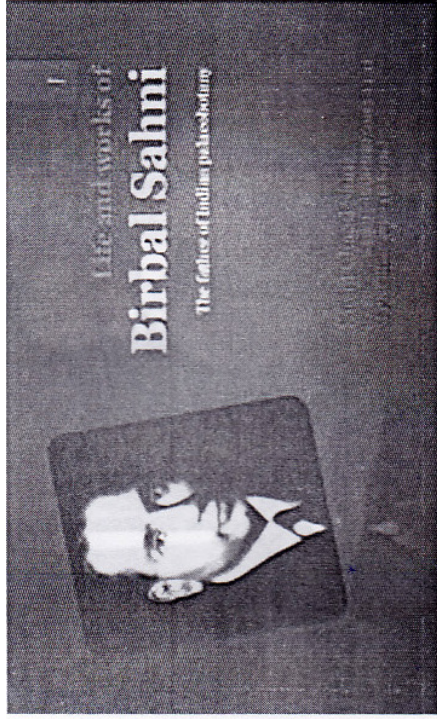
सभी बड़े वनस्पति वैज्ञानिकों से उनका निकट सम्पर्क हो गया था।

1919 में वे भारत लौटे और हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी में वनस्पति-विज्ञान के आचार्य नियुक्त किए गए। परन्तु विज्ञान-महाविद्यालय के तत्कालीन प्राचार्य से कुछ अनबन हो जाने के कारण उन्होंने 1920 में त्यागपत्र दे दिया और लाहौर के सरकारी कालेज में उसी पद पर चले गए। 1922 में लखनऊ विश्वविद्यालय के स्थापित होने पर वे वहां वनस्पति-विज्ञान के आचार्य नियुक्त हुए। अपने जीवन के अन्तिम दिन तक वे उसी पद की शोभा बढ़ाते रहे। इसके अलावा वे कई वर्षों तक लखनऊ विश्वविद्यालय के विज्ञान-विभाग के प्रमुख भी रहे। 1943 में जब उनके प्रयत्नों से लखनऊ में भूगर्भ-विभाग

स्थापित हुआ तो वे उसके भी आचार्य नियुक्त किए गए। इन तमाम कामों के साथ-साथ उनका अपना अनुसन्धान कार्य भी जारी रहा।

आचार्य साहनी का वनस्पति-विज्ञान के अनुसन्धान का कार्य कैम्ब्रिज में प्रारम्भ हुआ था। आरम्भ में 'जीवित वनस्पतियों' पर कुछ प्रयोग करने के पश्चात उन्होंने भारतीय वनस्पति अवशेषों की दुबारा जांच आरम्भ की। उनके पहले इनका वर्णन कुछ विदेशी वैज्ञानिकों ने किया था, जिनमें उन्होंने अनेक त्रुटियां पाई और इन्हीं अवशेषों में अनेक नये अवशेषों को खोज निकाला। इसी प्रकार उन्होंने और भी कई भारतीय वनस्पति-अवशेषों का शोध किया, जो भारत ही नहीं, बल्कि विज्ञान के लिए सर्वथा नया है। उनके इन प्रयोगों का विस्तृत विवरण' रायल

सोसाइटी' के *फिलासोफिकल ट्रांजेक्शन्स* और अन्य प्रख्यात विज्ञान पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ है। अपने लेखों में उन्होंने पुरातन वनस्पति-अवशेषों का ही वर्णन नहीं किया, वरन इनके आधार पर उनके कुल-सम्बन्ध, वनस्पति जगत के विकास तथा तत्कालीन भौतिक और जलवायु के विषय में अत्यन्त विश्वसनीय मौलिक खोजें की हैं। उनके वैज्ञानिक कार्यों से भूगर्भ और वनस्पति-विज्ञान संबंधी अनेक जटिल और विवादास्पद समस्याओं को हल करने में सहायता मिली है

आचार्य साहनी का अनुसन्धान-कार्य वनस्पति और भूगर्भ-विज्ञान तक ही सीमित नहीं रहा। उन्होंने पुरातत्त्व-सम्बन्धी भी अनेक शोध किए थे। एक बार रोहतक के पास यमुना घाटी का भ्रमण करते समय उन्हें खोकरा कोट नामक स्थान पर मिट्टी के कुछ टूटे हुए ठप्पे मिले, जिनमें सिक्कों के चिह्न अंकित थे। बाद में

वहां खुदाई करवाने पर उसी प्रकार के हजारों ठप्पे मिले। जिनसे प्रतीत होता है कि वहां ईसा से कोई 100 वर्ष पूर्व यौधेय राजाओं की टकसाल रही होगी। इन ठप्पों की सहायता से उन्होंने सिक्के ढालने की तत्कालीन विधि पर विस्तारपूर्ण प्रकाश डाला। इस कार्य के लिए उन्हें भारतीय न्यू मिसमेटिक सोसाइटी ने एक पदक प्रदान किया। अनुसन्धान-कार्य के अलावा और भी प्रकार से उन्होंने विज्ञान की सेवा की। पुरा वनस्पति-विज्ञान मन्दिर के अतिरिक्त उन्होंने भारतीय वनस्पति विज्ञान-परिषद, अखिल भारतीय विज्ञान कांग्रेस, भारतीय वैज्ञानिक अकादमी, राष्ट्रीय वैज्ञानिक अकादमी, राष्ट्रीय विज्ञान मन्दिर और करेण्ट साइंस की स्थापना तथा संचालन में विशेष योगदान दिया था। विज्ञान की बहुमुखी सेवाओं के कारण अनेक देशी-विदेशी वैज्ञानिक संस्थाओं ने उन्हें सम्मानित किया। 1929 में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने उन्हें एस.सी.डी. की उपाधि प्रदान की। यह उपाधि पाने वाले वे प्रथम भारतीय थे। 1936 में वे लन्दन की रायल सोसाइटी के फैलो मनोनीत हुए।

अखिल भारतीय विज्ञान कांग्रेस के वे1921 तथा 1938 में वनस्पति-

विभाग के अध्यक्ष रहे थे। 1926 में भूगर्भ-विभाग के अध्यक्ष और 1940 में प्रधानाध्यापक रहे। वे अनेक अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सभाओं में भारत के प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए। वे दो अन्तर्राष्ट्रीय वनस्पति-विज्ञान कांग्रेसों के उपसभापति रह चुके थे। अपनी मृत्यु से कुछ समय पूर्व वे स्वीडन में होने वाली एक अन्तर्राष्ट्रीय वनस्पति-विज्ञान कांग्रेस के सभापति भी निर्वाचित हुए थे।

एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक होने के साथ-साथ वे सच्चे देशभक्त थे। स्वदेशी और खद्दर के तो वे बहुत पहले से ही प्रेमी थे। स्वच्छ, सफेद खादी की अचकन, चूड़ीदार पायजामा, गांधी टोपी और लाल पंजाबी जूता पहने हुए वे, अपने आकर्षक व्यक्तित्व और स्वभाव से

सबको मुग्ध और प्रभावित कर लेते थे। 1922 में जब वेल्स के युवराज लखनऊ विश्वविद्यालय में आए थे, तो साहनी जी ने उनका बहिष्कार किया था। कांग्रेस के पहले आन्दोलन के समय उन्होंने उनमें भाग लेने का निश्चय किया, परन्तु बाद में विज्ञान द्वारा ही देश-सेवा करना अपने लिए उचित समझा। देश के स्वतन्त्रता-आन्दोलन के साथ सदैव उनकी सहानुभूति बनी रही। स्वदेशी के साथ वे राष्ट्रभाषा हिन्दी और उसमें विज्ञान की शिक्षा के भी बड़े समर्थक थे।

बहुआयामी प्रतिभा वाले इस विश्वविख्यात देशभक्त वैज्ञानिक पर आज पूरे भारत को गर्व है।